1. आत्मनिर्भरता

- बालकृष्ण भट्ट

बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के प्रतिनिधि निबंधकार, पत्रकार और नाटककार माने जाते हैं । वे मूलत पत्रकार थे। दिसम्बर १८७७ ई.में इलाहाबाद की हिन्दी वर्धिनी की ओर से मासिक पत्र 'हिन्दी प्रदीप' का प्रकाशन किया। भट्ट जी भारतेंदु मन्डल के निबंधकार हैं। भट्ट जी के राजनीतिक निबंधों में तत्कालीन राजनीति के प्रति कठोर आक्रोश देखने को मिलता है। इनके निबन्धों में भावना का भी समावेश है। इन्होंने निबंध साहित्य को एक नई दिशा और प्रतिष्ठा दी। साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक, नैतिक आदि विषयों पर निबंध लिखे। उनके निबंधों में हास्य और व्यंग्य का समन्वय मिलता है। उनकी शैली परिचयात्मक और भावात्मक है। उनकी भाषा प्रवाहमयी तथा सरल है। उनके निबंध 'साहित्य सुमन' और 'निबंधावली' पुस्तकों में संकलित हैं। 'सौ अजान एक सुजान, नूतन ब्रह्मचारी, रेल का विकट खेल, भाग्य की परख, जैसा काम वैसा परिणाम' आदि उनकी प्रमुख रनचाएँ है।

निबन्धों के प्रारंभिक युग को निःसंकोच भाव से 'भट्ट युग' के नाम से अभिहित किया जा सकता है। व्यंग्य, विनोद संपन्न शीर्षकों और लेखों द्वारा एक ओर तो भट्टजी प्रताप नारायण मिश्र के निकट हैं और गंभीर विवेचन एवं विचारात्मक निबन्धों के लिए वे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निकट हैं। इन्होंने तीन सौ से अधिक निबन्ध लिखे हैं। इनके निबन्धों का कलेवर अत्यंत संक्षिप्त है।

बालकृष्ण भट्ट का निधन 20 जुलाई, 1914 ई.में हुआ। लेखकों में उनका सर्वोच्च स्थान है। साहित्य की दृष्टि से भट्ट जी के निबन्ध अत्यंत उच्च कोटि के हैं। इस दिशा में उनकी तुलना अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध निबंधकार चार्ल्स लैंब से की जा सकती है। गद्य काव्य की रचना भी सर्वप्रथम भट्ट जी ने ही प्रारंभ की थी। इनसे पूर्व तक हिन्दी में गद्य काव्य का नितांत अभाव था।

आत्मनिर्भरता (अपने भरोसे पर रहना) ऐसा श्रेष्ठ गुण है कि जिसके न होने से पुरुष में पौरुषेयत्व का अभाव कहना अनुचित नहीं मालूम होता। जिनको अपने भरोसे का बल है, वे जहाँ होंगे, जल में तूंबी के समान सब के ऊपर रहेंगे। ऐसे ही चरित्र पर लक्ष्य कर महाकवि भारवि ने कहा है कि तेज और प्रताप से संसार भर को अपने नीचे करते हुए ऊँची उमंग वाले दूसरों के द्वारा अपना वैभव नहीं बढ़ाना चाहते। शारीरिक बल, चतुरंगिनी सेना का बल, प्रभूता का बल, ऊँचे कुल में पैदा होने का बल, मित्रता का बल, मंत्र-तंत्र का बल इत्यादि जितने बल हैं, निज बाहु-बल के आगे सब क्षीण बल हैं। आत्मनिर्भरता की बुनियाद वह बाहु-बल जो, सब तरह के बलों को सहारा देने वाला और उभारने वाला है।

यूरोप के देशों की जो इतनी उन्नति है तथा अमेरिका, जापान आदि जो इस समय मनुष्य जाति के सरताज हो रहे हैं, इसका यही कारण है कि उन देशों में लोग अपने भरोसे पर रहना या कोई काम करना अच्छी तरह जानते हैं। हिन्दुस्थान का जो सत्यानाश है, इसका यही कारण है कि यहाँ के लोग अपने भरोसे पर रहना भूल ही गए। इसी से सेवकाई करना यहाँ के लोगों से जैसी खूबसूरती के साथ बन पड़ता है, वैसा स्वामित्व नहीं। अपने भरोसे पर रहना जब हमारा गुण नहीं, तब क्यों कर संभव है कि हमारे में प्रभुत्व-शक्ति को अवकाश मिले।

निरी किस्मत और भाग्य पर वे ही लोग रहते हैं जो आलसी हैं। किसी ने अच्छा कहा है - ''दैव दैव आलसी पुकारा''।

ईश्वर भी सानकूल और सहायक उन्हीं का होता है, जो अपनी सहायता अपने आप कर सकते हैं। अपने आप अपनी सहायता करने की वासना आदमी में सच्ची तरक्की की बुनियाद है। अनेक सुप्रसिद्ध सत्पुरुषों की जीवनियाँ इसके उदारण तो हैं ही, वरन् प्रत्येक देश या जाति के लोगों में बल और ओज तथा गौरव और महत्व के आने का सच्चा द्वार आत्मनिर्भरता है। बुहधा देखने में आता है कि किसी काम के करने में बाहरी सहायता इतना लाभ नहीं पहुँचा सकती, जितनी आत्मनिर्भरता।

समाज के बंधन में भी देखिये, तो बहुत तरह के संशोधन सरकारी कानूनों के द्वारा वैसे नहीं हो सकते, जैसे समाज के एक-एक मनुष्य के अलग-अलग संशोधन अपने आप करने से हो सकते हैं।

कड़े से कड़े नियम आलसी समाज को परिश्रमी, अतिव्ययी को परिमित व्ययशील, शराबी को संयमी, क्रोधी को शांत या सहनशील, क्रूर को उदार, लोभी को संतोषीस मूर्ख को विद्वान्, दर्पान्ध को नम्र, दुराचारी को सदाचारी, कदर्य को उन्नतमना, दरिद्र भिखारी को धनाढ्य, भीरु-डरपोक को वीर-धूरीण, झूठे गपोड़िये को सच्चा, चोर को सहनशील, व्यभिचारी को एक-पत्नी व्रतधारी इत्यादि नहीं बना सकता किन्तु ये सब बातें हम अपने ही प्रयत्न और चेष्टा से अपने में ला सकते हैं।

सच पूछों जो जाति या कौम भी सुधरे हुए ऐसे ही एक-एक व्यक्ति की समष्टि है। समाज या जाती का एक-एक आदमी यदि अलग-अलग अपने को सुधारे, तो जाति-की-जाति या समाज-का समाज सुधर जाय।

सभ्यता और है क्या? यही कि सभ्य जाति के एक-एक मनुष्य आबाल, वृद्ध, वनिता सबों में सभ्यता के सब लक्षण पाये जाएँ। जिसमें आधे या तिहाई सभ्य हैं, वही जाति अर्द्धशिक्षित कहलाती है। जातीय उन्नति भी अलग-अलग एक-एक आदमी के परिश्रम, योग्यता-सुचाल और सौजन्य का मानो जोड़ है। उसी तरह जाति की अवनति एक-एक आदमी की सुस्ती, कमीनापन, नीची प्रकृति, स्वार्थपरता और भाँति-भाँति की बुरायों का बड़ा जोड़ है। इन्हीं गुणों और अवगुणों को जाति-धर्म के नाम से भी पुकारते हैं, जैसे सिक्खों में वीरता और जंगली जातियों में लुटेरापन।

जातीय गुणों को सरकार कानून के द्वारा एक या जड़-मूल से नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर सकती, वे किसी दूसरी शक्ल में न सिर्फ फिर से उभर आएँगे वरन् पहले से ज्यादा तरोताजगी और हरियाली की हालत में हो जाएँगे। जब तक किसी जाति के हर एक व्यक्ति के चरित्र में आदि से मौलिक सुधार न किया जाए, तब तक पहले दर्जे का देशानुराग और सर्वसाधारण के हित की वांछा सिर्फ कानून के अदलने-बदलने से, या नए कानून के जारी करने से, नहीं पैदा हो सकती।

जालिम-से-जालिम बादशाह की हुकूमत में रहकर कोई जाति गुलाम नहीं कही जा सकती, वरन् गुलाम वही जाति है, जिसमें एक-एक व्यक्ति सब भाँति कदर्य, स्वार्थ-परायण और जातीयता के भाव से रहित है। ऐसी जाति (कौम) जिसकी नस-नस में दास्य भाव समाया हुआ है, कभी उन्नति नहीं करेगी, चाहे कैसे ही उदार शासन से वह शासित क्यों न की जाए। तो निश्चय हुआ कि देश की सवतंत्रता की गहरी और मजबूत नींव उस देश के एक-एक आदमी के आत्मानिर्भरता आदि गुणों पर स्थित है।

ऊँचे-से-ऊँचे दर्जे की तालीम बिलकुल बेफायदा है, यदि हम अपने ही सहारे अपनी भलाई न कर सकें। जॉन स्टुअर्ट मिल का सिद्धातं है कि ''राजा का भयानक से भयानक अत्याचर देश पर कभी कोई बुरा असर नहीं पैदा कर सकता, जब तक उस देश के एक-एक व्यक्ति में अपने सुधार की अटल वासना दृढता के साथ बद्धमूल है।''

पुराने लोगों से जो चूक और गलती बन पड़ी है, उसी का परिणाम वर्तमान समय में हम लोग भुगत रहे हैं। उसी को चाहे जिस नाम से पुकारिए, यथा जातीयता का भाव जाता रहा, रुका नहीं है, आपस की हमदर्दी नहीं है, इत्यादि । तब पुराने क्रम को अच्छा मानना और उस पर श्रद्धा जमाए रखना हम क्यों कर अपने लिये उपकारी और उत्तम मानें। हम तो इसे 'गिरी चंडूखाने की गप' समझते हैं कि हमारा धर्म हमें आगे नहीं बढ़ने देता अथवा विदेशी राज से शासित हैं इसी से हम उन्नति नहीं कर सकते।

वास्तव में सच पूछो तो आत्मनिर्भरता अर्थात् अपनी सहायता अपने आप करने का भाव हमारे बीच है ही नहीं। यह सब हमारी वर्तमान दुर्गति उसी का परिणाम है। बुद्धिमानों का अनुभव हमें यही कहता है कि मनुष्य में पूर्णता विद्या से नहीं वरन् काम से होती है। प्रसिद्ध पुरुषों की जीवनियों के पढ़ने से ही नहीं, वरन् उन प्रसिद्ध पुरुषार्थी के चरित्र का अनुकरण करने से मनुष्य में पूर्णता आती है।

यूरोप की सभ्यता, जो आजकल हमारे लिये प्रत्येक उन्नति की बातों में उदाहरण स्वरुप मानी जाती है, एक दिन या एक आदमी के काम का परिणाम नहीं है। जब कई पीढ़ी तक देश का देश ऊँचे काम, ऊँच विचार

और ऊँची वासनाओं की ओर प्रबल-चित्त रहा, तब वे इस अवस्था
पहुँचे हैं। वहाँ के हर-एक फिरके, जाति या वर्ण के लोग धैर्य के साथ,
बाँध के बराबर अपनी-अपनी उन्नति में लगे हैं। नीचे-से-नीचे दर्जे के मनुष्य
किसान, कुली, कारीगर, आदि-और ऊँचे-से ऊँचे दर्जे वाले कवि, दार्शनिक
राजनीतिज्ञ सबों ने मिलकर कौमी तरक्की को इस सीमा तक पहुँचाया है
एक ने एक बात को आरम्भ कर उसका ढाँचा खड़ा कर दिया, दूसरे
उसी ढाँचे पर आरूढ़ रहकर दर्जा बढ़ाया, इसी तरह क्रम क्रम से कई
पीढ़ी के उपरांत वह बात जिसका देवल ढाँचा खड़ा कर दिया, दूसरे
उसी ढाँचे पर आरुढ़ रहकर दर्जा बढ़ाया, इसी तरह क्रम क्रम से कई
पीढ़ी के उपरांत वह बात जिसका केवल ढाँचा-मात्र पड़ा था, पूर्णता और
सिद्धि की अवस्था तक पहुँच गई।

ये अनेक शिल्प और विज्ञान, जिनकी दुनिया-भर में धूम मची है, इसी
तरह शुरु किए गए थे और ढाँचा छोड़ने वाले पूर्व पुरुष अपनी भाग्यवान
भावी संतान को उस शिल्प-कौशल और विज्ञान की बड़ी भारी बपौती का
उत्तराधिकारी बना गए थे।

आत्मनिर्भरता के सम्बन्ध में जो शिक्षा हमें खोतिहर, दूकानदार,
बढ़ई, लोहार आदि कारीगरों से मिलती है, उसके मुकाबले में स्कूल और
कालेजों का शिक्षा कुछ नहीं है, और यह शिक्षा हमें पुस्तकों या किताबों से
नहीं मिलती, वरन् एक-एक मनुष्य के चरित्र, आत्मदमन, दृढ़ता, धैर्य,
परिश्रम, स्थिर अध्यवसाय पर दृष्टि रखने से मिलती है। इन सब गुणों से
हमारे जीवन की सफलता है। ये गुण मनुष्य जाति की उन्नति के छोर हैं
और हमें जन्म में क्या करना चाहिये, इसके सारांश हैं।

बुहतेरे सत्पुरुषों के जीवन-चरित्र धर्म-ग्रन्थों के समान हैं, जिनके पढ़ने से हमें कुछ-न-कुछ उपदेश जरूर मिलता है। बड़प्पन किसी जाति विशेष या खास दर्जे के आदमियों के हिस्से में नहीं पड़ा। जो कोई बड़ा काम करे या जिससे सर्वसाधारण का उपकार हो, वही बड़े लोगों की कोटि में आ सकता है। वह चाहे गरीब से गरीब या छोटे दर्जे का क्यों न हो, बड़े-से बड़ा है। वह मनुष्य के तन में साक्षात देवता है।

हमारे यहाँ अवतार ऐसे ही लोग हो गए हैं। सबेरे उठकर जिनका नाम ले लेने से दिन भर के लिए मगंल का होना पक्का समझा जाता है, एसे महा महिमाशाली जिस कुल में जन्मते हैं, वह कुल उजागर और पुनीत हो जाता है। ऐसों ही की जननी वीर-प्रसू कही जाती है। पुरुष सिंह ऐसा एक पुत्र अच्छा, गीदड़ों की विशेषता वाले सौ पुत्र भी किस काम के ।

शब्दार्थ :

आत्मनिर्भरता = अपने भरोसे पर रहना

तूंबी = कद्दू को खोखला करके बनाया हुआ जल पात्र

सत्पुरुष = सज्जन, महात्मा, संत

हुकूमत = शासन करना

नींव = बुनियाद, मूल

कौम = जाति

तालीम = शिक्षा

हमदर्दी = सहानुभूति संवेदना